International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(6): 141-142

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(6): 141-142
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 29-09-2016
Accepted: 30-10-2016

डॉ0 नीलम रानी
सहायक प्रोफेसर (संस्कृत)
राजकीय स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय
महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

Correspondence
डॉ0 नीलम रानी
सहायक प्रोफेसर (संस्कृत)
राजकीय स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय
महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

संस्कृत नाटकों में वर्णव्यवस्था : एक विवेचन

डॉ0 नीलम रानी

भारतीय सभ्यता के साथ ही [1]वर्णव्यवस्था का विकास भी माना जाता है। वर्ण व्यवस्था में प्रत्येक वर्ण का अपना विषिष्ट कर्तव्य है। सभी वर्णों के अपने–अपने कर्म वैज्ञानिक आधार पर निर्धारित किये गये हैं। वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य भारतीय समाज में व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है। सभी वर्णों के मनुष्य समान हैं किन्तु उनमें अन्तर केवल गुण और कर्म का है। उपनिषद् और मनुस्मृति में वर्ण का आधार व्यक्ति के गुण एवं कर्म बताए गए हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में संस्कृत नाटकों में वर्णव्यवस्था के विषय में विस्तार में चर्चा की गई है–

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि चारों वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की सृष्टि मैंने गुण एवं कर्म के आधार पर की है।[2] ऋग्वेद के पुरूष सूक्त के अनुसार ब्राह्मण की उत्पत्ति भगवान के मुख से, क्षत्रिय की उत्पत्ति भुजाओं से, वैश्य की उत्पत्ति जंघाओं से तथा शुद्र की उत्पत्ति पैरों से मानी गई है।[3] शरीर में जिस प्रकार मुख, हाथ, जंघा और पैरों का अपना–अपना अस्तित्व और महत्व है, उसी प्रकार चतुर्वर्ण भी समाज में आवश्यकतानुसार महत्वपूर्ण थे।

ब्राह्मण की उत्पत्ति मुख से हुई इसलिए ब्राह्मण का कार्य अध्ययन–अध्यापन, भुजा शक्ति की घोतक है इसलिए क्षत्रियों का कार्य शौर्य और वीरता से जनता की रक्षा करना, जघांओं का कार्य चलने फिरने का है, इसलिए वैश्य जनता के भोजन का प्रबन्ध करता है, शूद्र की उत्पत्ति पैरों से होने के कारण उसका कार्य सबसे नीचा है। वह ऊपर के तीन वर्णों की सेवा करता है। चारों वर्णों के निम्नलिखित कर्म थे। संस्कृत नाटकों में भी वर्ण विभाजन हुआ है, जो निम्न प्रकार है–

1. ब्राह्मण 2. क्षत्रिय 3. वैष्य 4. षूद्र

1. ब्राह्मण

मनु स्मृति मे भगवान मनु ने ब्राह्मण के लिए छह प्रकार के कर्म बताए हैं– अध्ययन और अध्यापन, यज्ञ करना और कराना, दान देना और दान लेना।[4] भास और कालिदास के संस्कृत नाटकों के अनुसार तत्कालीन समाज में ब्राह्मण का प्रथम स्थान था। मध्यमव्यायोग के अनुसार ब्राह्मण केवल वर्णों में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण पृथ्वी पर पूज्य माना जाता था।[5]

प्रतिमानाटक के अनुसार ब्राह्मण मित्य दैनिक हवन, यज्ञादि का अनुष्ठान करता था।[6] मृच्छकटिक के अनुसार ब्राह्मण को दक्षिणा देना पवित्र कार्य था। सामाजिक समारोहों इत्यादि में ब्राह्मण दक्षिणा का बड़ा महत्त्व था।[7] ब्राह्मण के लिए यज्ञोववीत धारण करना अनिवार्य था जो मृच्छकटिक में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।[8]

कालिदास एवं भास के समय में ब्राह्मण का स्थान महत्वपूर्ण था जबकि मृच्छकटिक के समय में ब्राह्मण का उतना श्रेष्ठ स्थान नहीं दिया गया जितना कि वैदिक काल में था।

2. क्षत्रिय

मनु के अनुसार क्षत्रिय का कर्म प्रजा की रक्षा, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना और विषयों में लगना था।[9] प्रतिमानाटक में जब रावण सीता का हरण कर लेता है तो सीता बोल उठती है कि यदि राम को क्षत्रिय धर्म में आस्था रखता है तो मेरी रक्षा करें।[10] अभिज्ञान शाकुन्तलम् के अनुसार प्रजापालन राजा का परम कर्तव्य एवं धर्म था।[11] मृच्छकटिक में क्षत्रिय के लिए द्विज[12] कहा गया है। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है कि बाहुबल, तेज, बुद्धि, दक्षता, युद्ध से न भागना, दान देना आदि क्षत्रियों के स्वाभाविक गुण है।

3. वैश्य

मनुस्मृति के अनुसार वैष्यों का धर्म पशुपालन करना, दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, सूद पर

रूपया उधार देना व खेती करना था।13 मृच्छकटिक के अनुसार व्यापार एवं वाणिज्य उनका प्रमुख व्यवसाय था। वैश्य देश को उन्नति प्रदान करने के लिए व्यापार में लगे रहते थे। वे नगरों में जा–जाकर व्यापार करते थे।[14]
संस्कृत नाटकों में क्षत्रिय को वाणिज्य, नैगम, श्रेष्ठी तथा सार्थवाह से सम्बोधित किया है।

4. शुद्र

मनुस्मृति में मनु ने शूद्र का एक ही कर्म बतलाया है कि वह तीनों वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की सेवा करना।[15]
मृच्छकटिक के समय में भी छूआछूत प्रथा थी। शूद्र को हेय दृष्टि से देखा गया है। मृच्छकटिक में शकार को प्राकृत कहा है। इनके अनुसार प्राकृत पुरूष वेदोच्चारण के अधिकारी नहीं होते थे।[16]

निष्कर्षतः

कहा जा सकता है कि वर्णव्यवस्था भारतीय संस्कृति की मुख्य आधारशिला थी। वर्ण व्यवस्था का सिद्धान्त मनुष्य को सामूहिक रूप से शरीर से आत्मा की ओर ले जाने का प्रयत्न करना है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वृत्तियाँ न होकर मनुष्य की चार प्रवृत्तियाँ है। यद्यपि वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत वर्ण का अर्थ व्यक्ति की प्रवृति के विभाग से था, फिर भी इसका प्रयोग पेशे और व्यवस्था के लिए भी होता था। इसी अर्थ में व्यक्ति अपने वर्ण को परिवर्तित कर सकता था। शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शूद्र हो सकता था जैसे– विश्वामित्र क्षत्रिय थे परन्तु अपने गुणों तथा कर्मों के आधार पर ब्राहर्षि बन गये।

संदर्थ सूची

1. द्रष्टव्य – आप्टे कोश, पृष्ठ–901
   टिप्पणी (वर्ण+धज्)– रंग, रोगन मनुष्य श्रेणी (मुख्य रूप से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्ण के लोग)
   क) अतः शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः– मेघदूत 49
   ख) त्वच्चादातुं जलमवनते शार्डि.णो वर्णचौरे– मेघ0 46, / रघुवंश 8 / 42
2. श्रीमद्भगवद्गीता– चातुर्वण्यं मया सृष्टं गुण–कर्म विभागशः।
3. ऋग्वेदः, 10 / 90 / 12– ब्राहम्णोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत्।।
4. मनुस्मृति 1 / 88, अध्यापनमध्यनं यजनं याजनं तथा। दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राहम्णानामकल्पयत्।।
5. मध्यमव्यायोग 1 / 9, द्विजोत्तमा पूज्यतमाः पृथिव्याम्।
6. प्रतिमा अंक 3, पृ0 77
   भोः नैत्यकावसाने प्राणिधर्मनुत्तिष्ठति मयि..... प्रतिमाहगृहं प्रविष्टः।
7. मृच्छ, अंक (1), पृ. 19 – आर्य! सम्पन्नं भोजनं निः सपरनं च। अपि च दक्षिणा कोपिते भविष्यति।।
8. तदैव, अंक 3, पृ0 163 – 'यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राहम्णस्य महदुपकरणद्रव्यम्।'
9. मनुस्मृति–1.89: प्रजानां रक्षणं दान मिज्या ध्ययनमेव च। विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः।।
10. प्रतिमा– 5 / 21– क्षात्रधर्मे यदि स्निग्धः कुर्याद् रामः पराक्रमम्।
11. अभिज्ञान शाकुन्तलम्– 5.7:– स्वसुखनिराभिलाषः खिद्यसे लोकहेतोः। प्रतिदिनमथवा ते वत्तिरेवं विधैव।।
12. मृच्छ. 1 / 3– द्विजमुख्यतमः कविर्वभूव प्रथितः।
13. मनु. 1.90– पषूनां रक्षणं दान मिज्याध्ययनमेव च। वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृशिमेव च।। ––
14. मृच्छ. अंक 2– 'किमनेकनगरा भिगमनजनित विभव विस्तारो वणिजयुवा.....।'
15. मनु– 1.91– एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समदिशत्। एतेषामेव वर्णानां शुश्रूशामन सूयया।। ––
16. मृच्छः– 9.21